स्रोत भाषा के प्रतीकों के संकेत अर्थों का लक्ष्य भाषा में अंतरण का प्रामाणिक प्रयास होता है। आधुनिक युग में जीवन के अनेक क्षेत्रों की समृद्धि के साथ भाषा तथा संस्कृति के संस्कार वृद्धि के लिए अनुवाद एक अनिवार्य आवश्यकता के रूप में उभरकर सामने आया है। देश-विदेश की भाषा और संस्कृति को एक-दूसरे के सन्निकट पहुँचाकर उनकी दिशाओं का परिज्ञान कराना अनुवाद की अपनी विशेषता है। आधुनिक युग में जहाँ ज्ञान-विज्ञान के नए-नए क्षेत्र खुल रहे हैं, कम्प्यूटर-तकनालॉजी की होड़-सी लग रही है, वहाँ अनुवाद विज्ञान की महत्ता भी स्वयंसिद्ध होने लगी है। अनुवाद केवल एक प्रक्रिया अथवा रूपांतरण का माध्यम ही नहीं प्रत्युत एक अर्जित कला है। जो साधन देश-विदेशों की क्रियाओं को विपरीत दिशाओं में खड़ा करके उनकी भाषा, संस्कृति तथा समाज में अलगाव की स्थितियाँ पैदा करते हैं, उन्हें अनुवाद विज्ञान आपस में जोड़कर प्रगति की नई दिशाओं में मोड़ देता है। अतः अनुवाद कला समन्वय की कला है। उसी प्रकार, अनुवाद-विज्ञान अलगाव या विध्वंस का विज्ञान नहीं बल्कि एकता और नवनिर्माण का विज्ञान है। अतः आधुनिक युग की परमावश्यक प्रक्रिया के रूप में समाज, भाषा, संस्कृति आदि के घनीभूत समन्वय के लिए उसका नितान्त महत्त्व है।

अनुवाद की परिभाषा

अनुवाद (Translation) शब्द संस्कृत का है जिसके मूल में 'वद्' धातु है। 'वद' से तात्पर्य है बोलना, बात करना। इस 'वद्' धातु में 'घञ्' प्रत्यय जुड़ने से 'वाद' शब्द (वद् + घञ् = वाद) बनता है। 'वाद' शब्द में पीछे, बाद में एवं अनुवर्तिता आदि अर्थों में प्रयुक्त होने वाले 'अनु' उपसर्ग लगने से 'अनुवाद' शब्द बना है। अनुवाद का मूल अर्थ है "किसी के कहने के पश्चात कहना" अथवा पुनः कथन। कोश के अनुसार अनुवाद का अर्थ है—"पहले कहे गये अर्थ को फिर से कहना।"

(अ) अनुवाद शब्द का प्रयोग संस्कृत के आचार्य पाणिनि के "अष्टाध्यायी" में मिलता है :

"अनुवादे चरणानाम् (2, 4, 3)"

पाणिनि के उक्त सूत्र पर कय्यट ने महाभाष्यकार के कथन की टीका में कहा है :

यदा प्रतिपत्ता प्रमाणान्तरावगतमप्यर्थं कार्यान्तरार्थं प्रयोक्ता
प्रतिपाद्यते तदानुवादो भवति।

अर्थात किसी और प्रमाण से कही गई बात को ही दूसरे कार्य के लिए किसी द्वारा जब श्रोता से कहा जाता है तब अनुवाद होता है। इस प्रकार अनुवाद शब्द

का प्रयोग संस्कृत में हुआ है।

सामन्वय रूप से अनुवाद का कार्य एक अर्थात स्रोत भाषा में अभिव्यक्त विचारों को किसी दूसरी अर्थात लक्ष्य भाषा में व्यक्त करना होता है। मोटे तौर पर कहना हो तो, किसी एक भाषा की सामग्री को दूसरी भाषा में रूपांतरित कर देना ही अनुवाद होता है। प्रसिद्ध विद्वान फोरेस्टेन के शब्दों में :

(आ) "Translation is the transference of the content of a text from one language into another, bearing in mind that we cannot always dissociate the content from the form."

—Foresten

(इ) ए० एच० स्मिथ ने अनुवाद की परिभाषा इस प्रकार दी है : "अर्थ को बनाये रखते हुए अन्य भाषा में अंतरण करना अनुवाद है।" इसी प्रकार :

(ई) डॉ० स्टर्ट ने अनुवाद को भाषाविज्ञान से जोड़ते हुए लिखा है : "अनुवाद अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की वह शाखा है जिसका सम्बन्ध प्रतीकों के एक सुनिश्चित समुच्चय से दूसरे समुच्चय के अर्थ के अन्तरण से है।" Translation is that branch of applied science of language which is especially concerned with the problem— or the fact-of the transference of meaning from one set of patterned symbols in to another set of patterned symbols".

(उ) प्रसिद्ध विद्वान जे० सी० कैटफर्ड के अनुसार—

"The replacement of textual meterial in one language by equivalent textual material in another language"—J.C. Catford. अर्थात "अनुवाद एक भाषा के पाठ परक उपादानों का दूसरी भाषा के पाठपरक उपादानों के रूप में समतुल्यता के आधार प्रतिस्थापन है।"

(ऊ) प्रसिद्ध विद्वान हैलिडे ने भी अनुवाद की संकल्पना पर विचार करते हुए लिखा है : "अनुवाद एक सम्बन्ध है जो दो या दो से अधिक पाठों के बीच होता है। ये पाठ समान स्थिति में समान प्रकार्य सम्पादित करते हैं। दोनों पाठों का सन्दर्भ समान होता और उनसे व्यंजित होने वाला संदेश भी समान होता है।"

(ए) प्रसिद्ध भाषाविद न्यूमार्क ने अनुवाद की परिभाषा देते हुए लिखा है : "अनुवाद एक शिल्प है जिसमें एक भाषा में लिखित संदेश के स्थान पर दूसरी भाषा में उसी संदेश को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया जाता है।"

(ऐ) अनुवाद विज्ञान के प्रखर चिन्तक और प्रणेता नाइडा ने अनुवाद की परिभाषा कुछ इस प्रकार दी है :

"Translating consists in producing in the receptor language the closest natural equivalent to the message of the source

language, first in meaning and secondly in style." अर्थात अनुवाद का सम्बन्ध स्रोत भाषा के संदेश का पहले अर्थ तथा फिर शैली के धरातल पर लक्ष्य भाषा में निकटतम, स्वाभाविक तथा तुल्यार्थक उपादान प्रस्तुत करने से होता है।

हिन्दी में अनुवाद (Translation) के लिए भाषांतर, भाषानुवाद, टीका, रूपांतरण तथा तरजुमा आदि शब्दों का भी प्रचलन है किन्तु ट्रान्सलेशन के पर्यायी शब्द के रूप में ये शब्द उतने सही एवं युक्तिसंगत नहीं जान पड़ते जितना कि अनुवाद शब्द। अनुवाद में मूल पाठ अथवा विषय-वस्तु के कथ्य तथा उद्देश्य की पूरी रक्षा की जाती है फिर उस मूल या स्रोत भाषा में व्यक्त विचारों-भावों को सहज रूप से दूसरी भाषा अर्थात लक्ष्य भाषा में अभिव्यक्ति प्रदान की जाती है। प्रसिद्ध हिन्दी भाषाविद डॉ० भोलानाथ तिवारी ने अनुवाद पर विचार करते हुए उसको इस प्रकार परिभाषित किया है :

"एक भाषा में व्यक्त विचारों को, यथासम्भव समान और सहज अभिव्यक्ति द्वारा दूसरी भाषा में व्यक्त करने का प्रयास अनुवाद है।"

संक्षेप में कहना हो तो **"स्रोत भाषा के मूल पाठ के अर्थ को लक्ष्य भाषा के परिनिष्ठित पाठ के रूप में रूपांतरण करना अनुवाद है।"**

अनुवादक के लिए अपेक्षित गुण

अनुवाद एक कला ही नहीं अपितु विज्ञान भी है। निरन्तर अभ्यास, अनुशीलन तथा अध्ययन आदि से इसमें कार्यकुशलता प्राप्त की जा सकती है। अनुवादक का कार्य इसी कुशलता की पहचान होती है क्योंकि उसके सामने अनुवाद के समय दो भाषाएँ होती हैं और उन दोनों भाषाओं के स्वरूप तथा मूल प्रकृति एवं प्रवृत्ति का गहन अध्ययन, अनुशीलन करना अनुवादक का प्रथम दृष्या कार्य होता है। केवल शब्द, वाक्यांश अथवा पदावली का यथास्थिति अर्थ भर लिख देना अनुवाद नहीं होता बल्कि स्रोत भाषा में व्यक्त विचारों, भावों तथा प्रवृत्तियों की यथासम्भव व उसके समान किन्तु सहजाभिव्यक्ति के माध्यम से उन्हें दूसरी अर्थात लक्ष्य भाषा में प्रकट करना ही अनुवाद होता है।

किसी भी परिनिष्ठित अनुवाद में अनुवादक की भूमिका केन्द्रवर्ती और महत्तम होती है। अनुवाद प्रक्रिया में अनुवादक की महत्त्वपूर्ण भूमिका के तीन प्रमुख आयाम लक्षित किये जा सकते हैं :

(क) एक पाठक की भूमिका तथा अर्थग्रहण व भावग्रहण आदि की प्रक्रिया;

(ख) दुभाषिए एवं द्विभाषिक की भूमिका तथा अर्थांतरण एवं भावांतरण आदि की प्रक्रिया;

(ग) रचनाकार की भूमिका और सम्प्रेक्षण की भूमिका।

अनुवाद की रचना प्रक्रिया में इन भूमिकाओं का सही व पूरी तरह निर्वाह करने की चुनौती अनुवादक को निभानी पड़ती है। अतः अनुवाद एक कला है तो अनुवादक कलाकार, और अनुवाद अगर विज्ञान है तो अनुवादक एक विज्ञानी। फलतः अनुवादक की जिम्मेदारियाँ बढ़ जाती हैं। अनुवादक को अपना दृष्टिकोण सदैव वैज्ञानिक ही रखना चाहिए और एक भाषा के विचारों अथवा भावों की अभिव्यक्ति दूसरी भाषा में करते समय भाषा की प्रकृति तथा प्रवृत्ति पर भी उचित ध्यान देना अत्यावश्यक है। सफल अनुवाद-कार्य निष्पादन हेतु अनुवादक की कुछ विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

1. अनुवादक की सर्वप्रथम विशेषता या आवश्यकता है—भाषाओं का समुचित ज्ञान। अनुवादक के सामने दो भाषाएँ होती हैं, एक तो वह जिसका अनुवाद किया जाता है अर्थात स्रोत भाषा और दूसरी वह जिसमें अनुवाद किया जाता है अर्थात लक्ष्य भाषा। अतः इन दोनों भाषाओं का समुचित ज्ञान होना अत्यावश्यक होता है। दोनों भाषाओं की प्रवृत्ति, प्रकृति, संस्कृति, अभिव्यक्ति शक्ति आदि बातों से उसे अच्छी तरह वाकिफ होना चाहिए। अनुवादक को चाहिए कि स्रोत भाषा तथा लक्ष्य भाषा की वाक्य-रचना, शब्दों की चयन-प्रक्रिया, अभिव्यक्ति की सक्षम परख एवं पहचान और वाक्य-विन्यास एवं शैलियों पर सांस्कृतिक प्रभाव का गहन अध्ययन करने के बाद ही अनुवाद-कार्य पूरा करे, ताकि वह अपने दायित्व को अच्छी तरह निभा सके।

2. अनुवादक की दूसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता है—विषय का समग्र ज्ञान होना। विषय के परिपूर्ण ज्ञान के बिना किसी विज्ञान द्वारा किया गया अनुवाद भी हास्यास्पद एवं भद्दा हो सकता है क्योंकि विषय के अज्ञान की वजह से अर्थ का अनर्थ हो सकता है। जैसे बैंकिंग में एक बहुप्रचलित शब्द है 'सेक्योरिटी' जिसका अर्थ कोई भी सामान्य व्यक्ति या विद्वान हो हिन्दी में 'सुरक्षा' लिखेगा क्योंकि उसे बैंकिंग के ज्ञान का अभाव है। किन्तु जिन्हें बैंकिंग का ज्ञान है वह बैंकिंग के संदर्भ में 'सेक्योरिटी' का मतलब समझकर जमानत के तौर पर 'प्रतिभूति' ही लिखेंगे। अतः अनुवादक के लिए सम्बन्धित विषय का ज्ञान होना अपरिहार्य होता है।

3. अनुवादक की तीसरी विशेषता है—स्वतन्त्र विचार-शक्ति। स्रोत और लक्ष्य दोनों भाषाओं का ज्ञान, विषय की समझ और प्रतिभा होने पर भी अनुवाद के समय प्रत्यक्ष रूप से ऐसे अनेक मौकों पर अनुवादक की स्वतन्त्र विचार-शक्ति काम आसान कर देती है। अनुवाद के लिए अनेक बार अनुवादक की स्वतन्त्र विचार-शक्ति ही काम आ सकती है न कि हर बार शब्दकोश या पारिभाषिक शब्दावली।

सफल अनुवाद की पहचान

उत्तम अनुवाद अनुवादक की रुचि के साथ उसकी योग्यता, विषय-वस्तु की समझ, अध्ययनशीलता तथा भाषाओं की निपुणता आदि बातों पर बहुत कुछ निर्भर करता है। अनुवाद की सर्जन-प्रक्रिया में जब अनुवादक विषय की समझ, पाठ-विश्लेषण, शब्द रूप समायोजन तथा मूल से यथायोग्य तुलना और इन सबके रसायन को अपनी विशिष्ट शैली के कारण प्रभावी ढंग से अभिव्यक्ति प्रदान करता है तब ऐसा अनुवाद उत्तम कोटि की श्रेणी में आता है। उत्तम अनुवाद की पहचान तो इसी में है कि स्रोत भाषा की पूरी विशेषता और मूल विषय लक्ष्य भाषा में आकर अनुवाद पढ़ते समय ऐसा न महसूस हो कि अनुवाद पढ़ रहे हैं, किन्तु लगना तो यह चाहिए कि मूल पाठ ही पढ़ा जा रहा है। ऐसी स्थिति में अनुवादक को स्रोत तथा लक्ष्य दोनों भाषाओं में डूबकर भी अपनी भाषाई तट-स्थता बनाए रखनी चाहिए। उत्तम अनुवाद वही है जिसमें मूल विषय की मुख्य बातें ज्यों-की-त्यों आ जाएँ अर्थात मुख्य बातों में से कोई भी महत्त्वपूर्ण कड़ी छूटनी नहीं चाहिए और न ही तथ्य को विपरीत दिशाओं में तोड़ा-मरोड़ा जाना चाहिए। दूसरी बात यह कि प्रत्येक भाषा की अपनी अलग एवं स्वतन्त्र शैली, प्रकृति व प्रवृत्ति होती है। साथ में अभिव्यंजन की कुछ विशिष्ट प्रणालियाँ होती हैं। इन सबको सम्यक रूप से समझकर स्रोत भाषा को अभिव्यक्त किया जाना उत्तम अनुवाद के लिए बहुत आवश्यक है। अर्थात भाषाओं की अभिव्यंजना-शक्ति की यथायोग्य एवं उचित पहचान और परख होनी चाहिए। अन्यथा अनुवाद अटपटा, दुरूह, अनगढ़ तथा बोझिल हो जाएगा।

अच्छे और सफल अनुवाद की एक पहचान यह भी है कि वह कहीं से भी अनुवाद नहीं जान पड़ता बल्कि सम्यक रूप से मूल पाठ (Original Text) ही मालूम देता है। इन दोनों विशेषताओं में से पहली विशेषता उस भाषा के ठीक-ठीक ज्ञान पर ही आश्रित है, जिससे अनुवाद किया जाता है, अर्थात स्रोत भाषा से। दूसरी विशेषता उस भाषा की प्रवृत्ति, प्रकृति अथवा स्वरूप के सम्यक ज्ञान से सम्बन्धित है जिसमें अनुवाद किया जा रहा है अर्थात लक्ष्य भाषा। जब भी इन दोनों विशेषताओं में से किसी एक की त्रुटि होती है, वहीं अनुवाद अस्पष्ट, धूसर, भद्दा और हीन कोटि का हो जाता है। फलतः उत्तम अनुवाद के लिए इन दोनों विशेषताओं का होना नितांत अनिवार्य होता है। अंग्रेजी का एक वाक्य प्रयोग है —To give blank cheque जिसका हिन्दी अनुवाद 'कोरा चेक देना' किया जाए तो वह गलत होगा क्योंकि भाषाई पकड़ छूट गई और केवल शब्दशः अनुवाद हो गया। इसका सही अनुवाद होगा—'पूरी छूट देना' अथवा 'खुली छूट देना'। यदि हम कोई अनुवाद पढ़कर मूल पाठ या बात का सही अर्थ एवं भाव

समझने के बावजूद यह नहीं समझ सके कि वह अनुवाद किस भाषा से किया गया है तब वह अनुवाद सही अर्थों में उच्च कोटि का माना जाएगा।

अनुवाद करते समय अनुवादक को चाहिए कि वह अपनी भाषा की प्रवृत्ति, प्रकृति और स्वरूप को न भुला दे और जिस भाषा में अनुवाद करने बैठा है उस भाषा के प्रवाह में न बह जाए। ऐसा करने से अनुवाद कमजोर और हीन ही होगा। अनुवाद करते समय केवल शब्द तथा शब्दार्थों पर ही ध्यान देकर भावार्थ को गौण मानकर चलना अत्यंत अनुचित है। शब्द के स्थान पर शब्द और वाक्यों के स्थान पर वाक्य रखते जाने अर्थात केवल शब्दशः अनुवाद करने से और बड़ी भयंकर भूल अनुवाद के क्षेत्र में कोई नहीं होगी। अनुवादक में भावार्थ की पहचान और परख महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है और उत्तम अनुवाद के लिए उसी को ध्यान में रखा जाना चाहिए। अंग्रेजी का वाक्य It was raining cats and dogs का हिन्दी में शब्दानुवाद होगा—"बिल्ली और कुत्तों की बरसात हो रही थी" जो अनुवाद शिल्प की दृष्टि से गलत होगा 'कैट्स एंड डाग्ज़' से यहाँ भाव है "एक के पीछे दूसरा" अर्थात सतत वर्षा हो रही थी। किन्तु भारतीय संस्कृति सततधार वर्षा को मूसलाधार वर्षा से ही अभिव्यक्त करती है, इस विशिष्ट अभिव्यक्ति को ध्यान में रखकर अनुवाद करना चाहिए—मूसलाधार बरसात हो रही थी। यह अनुवाद मूल पाठ के भावों को उचित एवं संतुलित अभिव्यक्ति प्रदान करता है, इसीलिए उसका सौन्दर्य बढ़कर वह उत्तम अनुवाद की श्रेणी में आएगा।

अनुवाद की शैली

अनुवाद का मूल उद्देश्य अथवा लक्ष्य होता है मूल पाठ को लक्ष्य भाषा में सही अभिव्यक्ति के साथ प्रतिष्ठापित करना। इस दृष्टि से परिनिष्ठित अनुवाद हेतु कुशल अनुवादक की पहचान सही होगी कि वह अनुवाद की शैली प्रायः वही इस्तेमाल करता है जो मूल पाठ की होती है। भाषाई स्तर पर विभिन्न शैलियाँ विश्व भर में प्रचलित हैं जिनमें प्रमुख है—व्यास शैली, समास शैली, व्यंजक शैली, सामान्य शैली, उत्तम शैली, लाक्षणिक शैली, अलंकृत शैली, मुहावरेदार शैली तथा सरल शैली आदि। यह सही है कि किसी भी शैली के प्रमुख तत्त्वों में छन्द, ध्वनि, अलंकार, शब्द-शक्तियाँ, शब्दों के गर्भित अर्थ आदि को अनुवाद में यथास्थिति प्रक्षेपित करना बहुत कठिन कार्य है। फिर भी अनुवाद के समय इन बातों को दृष्टिगत रखना बहुत जरूरी होता है। अनुवाद के मूल पाठ की शैली में यथास्थिति आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी किया जा सकता है। अनुवाद की शैली में मूल बात यह होती कि अनुवाद का पाठक किस श्रेणी का है। पाठक के स्तर के अनुसार भी अनुवाद की शैलियों में परिवर्तन किया जा सकता है या अनुवाद की शैलियाँ हो सकती हैं।

अनुवाद का सौन्दर्य अथवा सफलता बहुत कुछ उसकी शैली पर निर्भर करती है। इसीलिए अन्य सभी बातों के एक जैसे होने के बावजूद व्यक्तिगत शैली में सौन्दर्य एवं सर्जन-शक्ति के कारण किसी एक अनुवादक द्वारा किया गया अनुवाद बहुत उत्तम श्रेणी का होता है, तो किसी का सामान्य और किसी का भद्दा एवं फूहड़। इस प्रकार, अनुवाद की विभिन्न शैलियाँ हो सकती हैं जो अनुवादक के व्यक्तित्व एवं विचार-मंथन के अनुरूप विषयानुसार निर्धारित होती हैं। परन्तु सामान्यत: अनुवाद की सर्वोत्तम शैली वही मानी जा सकती है जिसमें मूल भाषा की शैली लक्ष्य भाषा में भी विद्यमान हो और अनुवादक की स्वयं की विशेष अनुवाद शैली का सुरुचि पूर्ण सम्यक् समन्वय किया गया हो। शैली की विशेषता तथा व्यक्तिगत चिंतन अनुवादक को भी सर्जक (Creative writer) की कोटि में ला खड़ा करते हैं।

अनुवाद-प्रक्रिया

अनुवाद की विभिन्न परिभाषाओं से स्पष्ट होता कि अनुवाद में स्रोत भाषा (Source Language), लक्ष्यभाषा (Target Language) तथा अनुवादक (Translator) की अनिवार्य भूमिका रहती है। स्रोत भाषा के विचार, भाव तथा कथ्य को यथास्थिति समतुल्यता अथवा निकटतम रूप मे लक्ष्य भाषा में अभिव्यक्त करने के लिए अनुवादक को जिस विशिष्ट क्रियाविधि या प्रविधि से गुजरना पड़ता है, उसे अनुवाद की प्रक्रिया कहा जा सकता है।

अनुवाद-प्रक्रिया के बारे में पश्चिमी विद्वान नाइडा, न्यूमार्क, तथा बाथगेट ने कुछ सिद्धान्त प्रतिपादित किए हैं। नाइडा ने अनुवाद-प्रक्रिया के तीन सोपान माने हैं—(1) विश्लेषण, (2) अन्तरण तथा (3) पुनर्गठन। न्यूमार्क ने अनुवाद-प्रक्रिया के विश्लेषण द्वारा उसे नये ढंग से प्रस्तुत किया और उसके तीन सोपान माने—(1) मूल भाषा पाठ, (2) बोधन तथा व्याख्या और (3) अभिव्यक्ति (पुनस्सर्जन)। बाथगेट ने अनुवाद की प्रक्रिया को विस्तृत एवं व्यावहारिक ढंग से प्रस्तुत किया है। बाथगेट ने अनुवाद-प्रक्रिया के सात सोपान माने हैं—(1) मूल भाषा पाठ का समन्वयन, (2) विश्लेषण, (3) बोधन, (4) पारिभाषिक अभिव्यक्ति, (5) पुनर्गठन, (6) पुनरीक्षण और (7) पर्यालोचन एवं लक्ष्य भाषा पाठ।

अनुवाद-प्रक्रिया के उक्त प्रारूपों तथा प्रविधि-सिद्धान्तों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि अनुवाद में मूलभूत इकाई है—मूल पाठ (Original Text)। इस मूल पाठ का बोधन तथा उसकी लक्ष्य भाषा में अभिव्यक्त के बीच की सैद्धान्तिक प्रक्रिया ही अनुवाद की प्रक्रिया है। अनुवाद की प्रक्रिया में अनुवादक को मूल पाठ (Original Text) की विषय वस्तु, विषय अभिव्यक्ति की शैली, मूल पाठ की व्याकरणिक संरचना तथा पाठ का विषयगत सामाजिक, सांस्कृतिक सन्दर्भ आदि

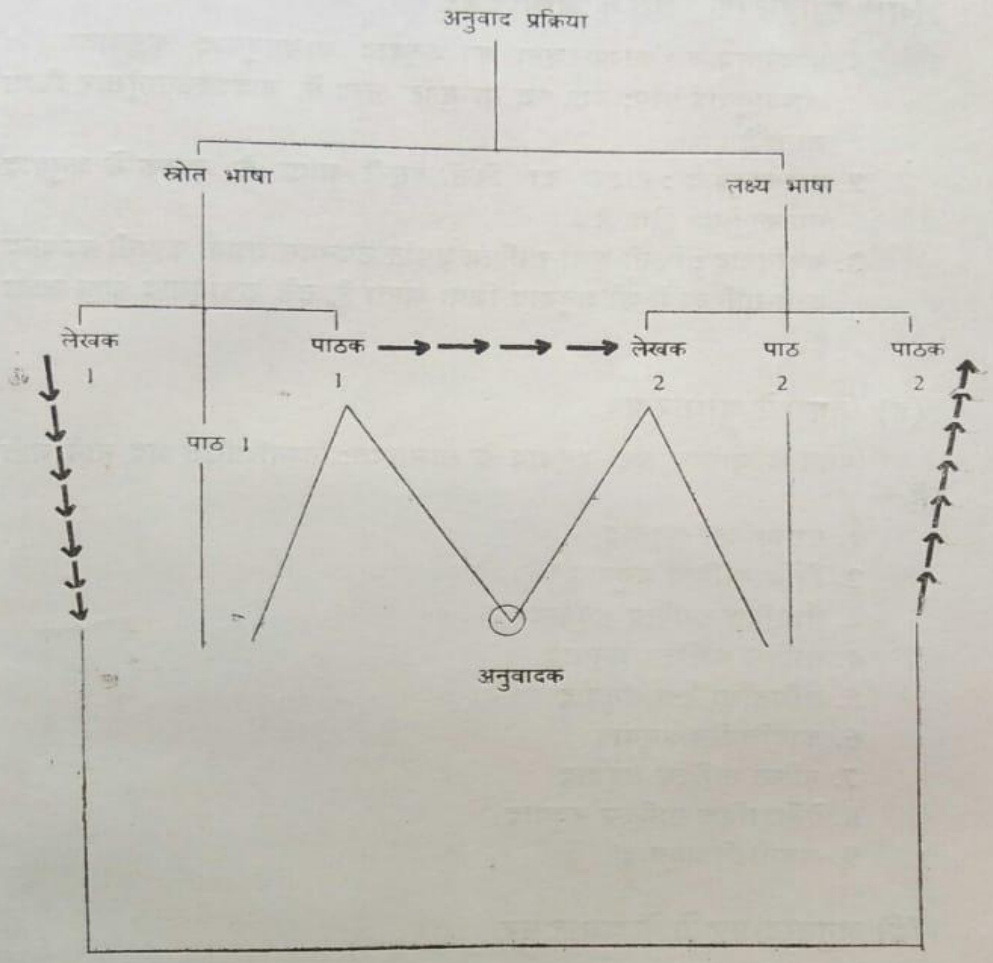

(अ) गद्य-पद्य के आधार पर

1. गद्यानुवाद : यह अनुवाद गद्य में होता है या किया जाता है। गद्य का ही गद्य में अनुवाद किया जाता है।
2. पद्यानुवाद : यह अनुवाद पद्य में होता है। पद्य का ही पद्य में अनुवाद किया जाता है। इसे छंदानुवाद भी कहा जाता है।
3. मुक्त छंदानुवाद : स्पष्ट है, यह अनुवाद मुक्त छंद में किया जाता है। मूल सामग्री या पाठ मुक्त छंद में होने पर ही मुक्त छंदानुवाद किया जाता है।

(आ) साहित्यिक विधा के आधार पर

1. काव्यानुवाद : काव्य-रचना का अनुवाद काव्यानुवाद कहलाता है। काव्यानुवाद प्राय: गद्य, पद्य या मुक्त छन्द में, आवश्यकतानुसार किया जाता है।
2. नाटकानुवाद : नाटक का किसी दूसरी भाषा के नाटक में अनुवाद नाटकानुवाद होता है।
3. कथानुवाद : किसी कथा-साहित्य अर्थात उपन्यास अथवा कहानी का अन्य कथा-साहित्य में जो अनुवाद किया जाता है, उसे कथानुवाद कहा जाता है।

(इ) विषय के आधार पर

विषय के आधार पर अनुवाद के सामान्यत: निम्नलिखित भेद माने जाते हैं—

1. पत्रकारिता अनुवाद
2. विधि साहित्य अनुवाद
3. वैज्ञानिक साहित्य अनुवाद
4. धार्मिक साहित्य अनुवाद
5. ललित साहित्य अनुवाद
6. कार्यालयीन अनुवाद
7. गणित साहित्य अनुवाद
8. ऐतिहासिक साहित्य अनुवाद
9. तकनीकी अनुवाद

(ई) अनुवाद-प्रकृति के अधार पर

1. मूलनिष्ठ अनुवाद : यह अनुवाद मूल पाठ या विषय-वस्तु का अनुगमन करता है।
2. मूलमुक्त अनुवाद : इस प्रकार के अनुवाद के अनुवादक को काफी छूट होती है। परन्तु विचारों, भावों अथवा कथ्य तबदीली की छूट न होकर अभिव्यक्ति शैली की होती है।
3. शब्दानुवाद : इस प्रकार के अनुवाद में मूल पाठ का शब्दश: अनुवाद किया जाता है।
4. भावानुवाद : इस प्रकार के अनुवाद में मूल पाठ के अर्थ, विचार तथा भावों पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

5. छायानुवाद : छायानुवाद प्राय: शब्दानुवाद की तरह मूल पाठ के शब्दों का अनुसरण न करके उसके भावों, विचारों आदि की छाया मात्र लेकर चलता है।
6. सारानुवाद : लम्बे मूल पाठ, भाषण या सम्भाषण आदि का संक्षिप्त रूप में जो अनुवाद प्रस्तुत किया जाता है, वह सारानुवाद कहलाता है।
7. व्याख्यानुवाद : मूल पाठ का व्याख्या के साथ जो अनुवाद किया जाता है, उसे व्याख्यानुवाद कहा जाता है।
8. आदर्श अनुवाद : इसे स्वाभाविक अनुवाद भी कहा जाता है। मूल पाठ के भावों, कथ्यों तथा विचारों का यथास्थिति जो अनुवाद प्रस्तुत किया जाता है, उसे आदर्श अनुवाद कहते हैं।
9. रूपांतरण : इसमें प्राय: मूल भाषा या पाठ के रूप को आवश्यकतानुसार बदल दिया जाता है। प्राय: रेडियो रूपांतरण इस श्रेणी में आते हैं।
10. वार्तानुवाद : इसे आशु अनुवाद भी कहा जाता है। भिन्न भाषाओं अर्थात दो भिन्न भाषा-भाषी के बीच दुभाषियों के रूप में अनुवादक जो अनुवाद करता है, उसे वार्तानुवाद कहा जाएगा।

इस प्रकार अनुवाद के अनेक भेद-प्रभेद हैं। सामान्यतया अनुवाद के जो महत्त्वपूर्ण प्रकार बहुप्रचलित हैं, यहाँ उनके बारे में विस्तृत चर्चा करना अत्यावश्यक है। ये महत्त्वपूर्ण अनुवाद-प्रकार निम्नलिखित हैं—

(अ) शब्दानुवाद

अनुवाद के क्षेत्र में शब्दानुवाद को उच्च कोटि की श्रेणी में नहीं कहा जाता किन्तु अनुवादक प्रक्रिया में ऐसे अनेक बिंदु आते हैं जब शब्दानुवाद के सिवाय कोई पर्याय नहीं रह जाता। शब्दानुवाद वैसे भी भावानुवाद के लिए पूरक तत्त्व के रूप में काफी महत्त्वपूर्ण माना जा सकता है। शब्दानुवाद में स्रोत भाषा के शब्दों तथा शब्दांशों को ज्यों-का-त्यों लक्ष्य भाषा में परिवर्तित या रूपांतरित करके अनुवाद कर लिया जाता है अर्थात इसमें मूल पाठ या सामग्री की प्रत्येक शब्दाभिव्यक्ति का अनुवाद प्राय: उसी क्रम में किया जाता है। इसीलिए अनुवाद के इस प्रकार को निकृष्ट कहा जाता है क्योंकि प्रकृति भिन्न होने के साथ ही प्रत्येक भाषा का शब्दक्रम भी भिन्न-भिन्न होता है। अंग्रेजी का एक शब्द है—Pay जिसका शब्दानुवाद भुगतान अथवा वेतन होगा किन्तु बैंकिंग क्षेत्र में उसे 'भुगतान करें' इस पूरे वाक्य के अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है। इस प्रकार, शब्दानुवाद से कभी-कभी उलझनें भी पैदा हो सकती हैं। शब्दानुवाद में मूल बातों के यथातथ्य होने के कारण अनुवाद की भाषा प्राय: कृत्रिम एवं निष्प्राण हो जाती है तथा उसमें मूल पाठ या रचना का स्वाभाविक प्रवाह नहीं रह जाता या नहीं आ पाता। फलत:

अनुवाद दुर्बोध, बोझिल और कभी-कभार हास्यास्पद भी हो जाता है। शब्दानुवाद के रोचक उदाहरण इस प्रकार दिए जा सकते हैं—

1. My head is eating circles.
   मेरा सिर चक्कर खा रहा है।
2. He became water and water.
   वह पानी-पानी हो गया।
3. Warm welcome.
   गरमागरम स्वागत।
4. It was raining cats & dogs.
   बिल्ली-कुत्तों की बरसात हो रही थी।

(आ) भावानुवाद

अनुवादक क्षेत्र में अन्य सभी अनुवादों की अपेक्षा भावानुवाद को उत्तम कोटि का अनुवाद माना जाता है। भावानुवाद में शब्दानुवाद की तरह केवल शब्द, वाक्यांश तथा वाक्य-प्रयोग आदि पर ध्यान न देकर स्रोत भाषा तथा लक्ष्य भाषा के मूल अर्थ, विचार और भावाभिव्यक्ति पर ही अधिक ध्यान दिया जाता है। भावानुवाद में मूल पाठ की आत्मा अर्थात मूल कथ्य की सामग्री को ही मुख्य रूप मानकर उसे लक्ष्य भाषा में यथायोग्य पद्धति से सम्प्रेषित किया जाता है। अनुवाद के क्षेत्र में कभी-कभी ऐसी स्थितियाँ पैदा होती हैं जब अनुवादक किसी भी पाठ या वाक्यांश का ठीक-ठीक शब्दानुवाद करने में असमर्थ होता है। तब ऐसी स्थिति में उस सामग्री के अनुवाद के लिए भावानुवाद का ही सहारा लेना पड़ता है। डॉ० भोलानाथ तिवारी की मान्यता है—"सामान्यतः मूल सामग्री यदि सूक्ष्म भावों वाली है तो उसका भावानुवाद करते हैं और यदि वह तथ्यात्मक वैज्ञानिक या विचार प्रधान है तो उसका शब्दानुवाद करते हैं।" भावानुवाद को अनुवाद प्रक्रिया की महत्त्वपूर्ण पद्धति माना जाता है, क्योंकि भावानुवाद में मूल भाषा पाठ के प्रमुख विचार भाव, अर्थ तथा संकल्पना को लक्ष्य भाषा में उनकी समस्त विशेषताओं के साथ सम्प्रेषित किया जाता है। भावानुवाद में अनुवादक का ध्यान कथ्य के भाव, विचार तथा अर्थ पर विशेष रूप से बना रहता है। वस्तुतः इसमें अनुवादक मूल भाषा (स्रोत भाषा) पाठ की सामग्री के अर्थ को सम्पूर्णतः एवं समुचित ढंग से लक्ष्य भाषा पाठ में लाने की चेष्टा करता है, फलतः इसमें स्रोत भाषा की मूल भाव-भंगिमा तथा रचनाधर्मिता प्रायः सुरक्षित बनी रहती है। अतः इस दृष्टि से भावानुवाद सर्वाधिक उपयोगी माना जा सकता है।

(इ) छायानुवाद

छायानुवाद के सन्दर्भ में 'छाया' शब्द से तात्पर्य है धूसर या धुंधला प्रभाव। छायानुवाद में मूल पाठ की अर्थच्छाया को ग्रहण कर अनुवाद किया जाता है। अर्थात इसमें स्रोत भाषा की मुख्य बातें, दृष्टिकोण तथा विचार या संकल्पना आदि को ग्रहण करके इन सबके संकलित प्रभाव को लक्ष्य भाषा में रूपांतरित किया जाता है। छायानुवाद में शब्दानुवाद की तरह स्रोत भाषा अथवा मूल पाठ के शब्दों का अनुसरण न करके, या भावानुवाद की तरह मूल विचारों के भावार्थ का यथातथ्य अनुगमन न करके, इन दोनों से मुक्त होकर इनकी छाया मात्र लेकर स्वतन्त्र रूप से अनुवाद किया जाता है।

(ई) व्याख्यानुवाद

व्याख्यानुवाद में मूल पाठ की व्याख्या अथवा टीका के साथ अनुवाद किया जाता है। व्याख्या स्वाभाविक रूप से अनुवादक के व्यक्तित्व तथा चिंतन प्रणाली पर आधारित होती है जिससे अनुवादक का महत्त्व उभरकर सामने आ जाता है। इस प्रकार के अनुवाद में अनुवादक मूल विचारों, भावों तथा संकल्पनाओं को अपनी शैली के अनुसार सविस्तार रूपायित करता है। व्याख्यानुवाद में विषय-वस्तु के निरूपण तथा स्पष्टीकरण आदि के लिए यथास्थिति अतिरिक्त उद्धरण, उदाहरण अथवा उक्ति आदि जोड़े जा सकते हैं। महाराष्ट्र के संत ज्ञानेश्वर द्वारा किया गया भगवद् गीता का अनुवाद 'ज्ञानेश्वरी' तथा लोकमान्य तिलक द्वारा किया गया गीता का अनुवाद 'गीता-रहस्य' इसी श्रेणी में आएँगे।

(उ) सारानुवाद

लम्बी रचनाओं, लम्बे भाषणों, बृहद प्रतिवेदनों तथा राजनीतिक वार्ताओं आदि को उसके कथ्य तथा मूल तत्त्व को पूर्णतः सुरक्षित रखते हुए प्रसंग अथवा सन्दर्भ की आवश्यकतानुसार संक्षेप में रूपांतरित करने की प्रक्रिया को सारानुवाद कहते हैं। ऐसे अनुवाद में स्रोत भाषा की सामग्री का सारांश मूल कथ्य को सुरक्षित रखते हुए लक्ष्य भाषा में अंतरित कर दिया जाता है। अनुवाद की इस पद्धति का सहारा मुख्यतः दुभाषिये, समाचार पत्रों के संवाददाता तथा संसद अथवा विधान मण्डलों की कार्यवाही के रिकार्डकर्ता आदि लेते हैं।

(ऊ) आशु-अनुवाद

आधुनिक युग में सांस्कृतिक, सामाजिक तथा राजनीतिक आदान-प्रदान हेतु आशु-अनुवाद पद्धति को समस्त विश्व में अत्यधिक महत्त्व प्राप्त है। एक-दूसरे

की भाषा न जानने वाले दो या अधिक भिन्न भाषा-भाषी जब महत्त्वपूर्ण बातचीत या चर्चा करते हैं तब उनके विचारों और भावों को एक-दूसरे तक सम्प्रेषित करने का महत्तम कार्य दुभाषिया (Interpreter) करता है। दुभाषिया अपने कार्य को आशु-अनुवाद के माध्यम से ही सम्पन्न करता है। दुभाषिया अर्थात आशु-अनुवादक की कुछ विशेष जिम्मेदारियाँ भी हो जाती हैं। जैसे—दोनों भाषाओं के सूक्षतम ज्ञान के साथ उन भाषाओं की सामाजिक तथा सांस्कृतिक प्रवृत्तियों की समूचित जानकारी का भी होना आवश्यक होता है।

(ए) आदर्श अनुवाद

इसे स्वाभाविक सटीक अनुवाद भी कहा जाता है। इसमें अनुवादक मूल पाठ की मूल सामग्री का अनुवाद अर्थ तथा अभिव्यक्ति सहित लक्ष्य भाषा में निकटतम एवं स्वाभाविक समानकों (Closest natural equivalent) द्वारा करता है। संक्षेप में, अनुवाद मूल के अनुसार ही होता है और उसमें अनुवादक अपना व्यक्तित्व तथा व्यक्तिगत चिंतन आदि नहीं आने देता है। आदर्श अनुवाद मूल भाषा पाठ जैसा ही दृष्टिगत होता है। अर्थात अनुदित पाठ को पढ़ते समय पाठक को लगता है कि वह कोई अनुवादित कृति न पढ़कर मूल कृति ही पढ़ रहा है। इस प्रकार के अनुवाद में अनुवादक को किसी प्रकार की छूट नहीं होती और वह स्रोत भाषा के मूल पाठ के साथ कोई ज्यादती या मनमानी नहीं कर सकता।

(ऐ) रूपान्तरण

रूपान्तर से तात्पर्य है किसी 'रूप' को बदलना। इसमें अनुवाद के जरिये विधान्तर हो जाता है। अर्थात अनुवादक किसी विधा का रूप बदलकर उसे दूसरी विधा में परिवर्तित कर देता है। इसमें उपन्यास अथवा कहानी को नाटक या एकांकी आदि में परिवर्तित कर दिया जाता है। स्थिति, सन्दर्भ एवं आवश्यकतानुसार पात्र, काल-क्रम या घटना-क्रम आदि में मामूली फेर-बदल भी किया जाता है। रेडियो अथवा दूरदर्शन पर रूपान्तर को साकार होते देखा जा सकता है।

प्रयोजनमूलक हिन्दी और अनुवाद

प्रयोजनमूलक हिन्दी के आविर्भाव के साथ आधुनिक युग में उसकी उपादेयता, अनुप्रयुक्तता तथा गत्यात्मकता के लिए एक अत्यन्त प्रभावी माध्यम-तत्त्व के रूप में अनुवाद की महत्ता अक्षुण्ण बनी हुई है। व्यापक अर्थ में देखा जाए तो प्रतीत होता है कि हिन्दी भाषा के सन्दर्भ में प्रयोजनमूलक हिन्दी, पारिभाषिक शब्दावली तथा अनुवाद एकमेकाश्रित तत्त्व हैं।

विश्वफलक पर तेजी से आविर्भूत ज्ञान-विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के अनेकविध

क्षेत्रों का फैलाव समस्त जगत में तीव्र गति से हो रहा है। ज्ञान-विज्ञान के उक्त सभी क्षेत्रों, देश-विदेशों की संस्कृति तथा देश के प्रशासन आदि को यथाशीघ्र समुचित ढंग से अभिव्यक्ति देने में एक सहायक अनिवार्य तत्त्व के रूप में अनुवाद का महत्त्व स्वयंसिद्ध है। अनुवाद के माध्यम से ही प्रयोजनमूलक हिन्दी में विभिन्न देशी-विदेशी प्रगत भाषाओं का ज्ञान, देश-विदेश की संस्कृति, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों से सम्बन्धित ज्ञान, विश्व में प्रचलित विभिन्न भाषाओं की पारिभाषिक शब्दावली का आगमन और प्रचलन सम्भव हुआ है। इस प्रकार, प्रयोजनमूलक हिन्दी के रूप, ज्ञान-क्षेत्र, पारिभाषिक शब्द भंडार तथा भाषिक संरचना की विशिष्टता आदि की श्रीवृद्धि में अनुवाद की अहम् तथा अनिवार्य भूमिका बनी हुई है।

(ग) भाषिक संरचना

प्रयोजनमूलक हिन्दी का तीसरा और महत्तम तत्त्व है, उसकी विशिष्ट भाषिक संरचना। कोई भी भाषा अपने सभी प्रयोगों या प्रयुक्तियों में एक-सी नहीं होती। विषय, सन्दर्भ तथा प्रयुक्ति के अनुसार भाषा की संरचना बदलती है। प्रयोजनमूलक हिन्दी में भाषा का विशिष्ट रूप प्रयुक्त होता है जो साहित्यिक भाषा से भिन्न रहता है। वस्तुतः साहित्य या सामान्य व्यवहार की भाषा तथा प्रयोजनमूलक भाषा सामान्यतः एक ही होती है किन्तु उनकी शब्दावली और संरचना में मूलभूत भेद या अन्तर पाया जाता है, जिसे स्पष्ट करना आवश्यक है।

साहित्यिक या सामान्य व्यवहार की भाषा तथा प्रयोजनमूलक भाषा वस्तुतः एक ही है किन्तु उनकी शब्दावली, भाषिक संगठन तथा प्रयुक्ति के उद्देश्य अलग-अलग होते हैं। सामान्य या साहित्यिक भाषा व्यवहार में सहजता रहती है, इसके विपरित प्रयोजनमूलक भाषा की प्रयुक्ति में विशेष प्रयास, प्रयुक्ति-बोध तथा क्षेत्र विशेष का विशेष ज्ञान प्रयोक्ता को होना अत्यावश्यक होता है। ज्ञान-विज्ञान के फैलाव के फलस्वरूप बदली हुई स्थितियों की आवश्यकताओं के प्रयोजन-विशेष या कार्य-विशेष के सन्दर्भ में प्रयोग में लायी जाने वाली भाषा प्रयोजनमूलक भाषा कहलाती है। प्रयोजनमूलक भाषा तथा साहित्यिक या सामान्य व्यवहार की भाषा में मूलभूत अन्तर यह होता है कि सामान्य या साहित्यिक भाषा अर्थ-बहुल, व्यंजनाश्रित अथवा वक्र या लक्षणा-व्यंजना से युक्त हो सकती है, इसके विपरित प्रयोजनमूलक भाषा अभिधापरक, एकार्थक तथा स्पष्ट होती है ताकि प्रयोक्ता की बात का निश्चित और सही-सटीक अर्थ समझा जा सके। प्रयोजनमूलक भाषा में व्यंग्यार्थ, अलंकार आदि की कोई गुंजाइश नहीं होती, इसीलिए यह भाषा बोधगम्य तथा अत्यधिक स्पष्ट होती है।

प्रयोजनमूलक हिन्दी की भाषिक संरचना अपने में अनेक विशिष्टताएँ समेटे

हुए हैं। प्रयोजनमूलक हिन्दी की भाषिक अभिव्यक्ति शैली गम्भीर, वाच्यार्थ प्रधान तथा व्यंग्यार्थ रहित अर्थात एकार्थक होती है। प्रयोजनमूलक भाषा संरचना का एक "मानक रूप" (Standard form) निश्चित होता है जिसमें एकरूपता, सुनिश्चितता तथा औचित्य का निर्वाह अनिवार्यतः किया जाता है। प्रयोजनमूलक हिन्दी की भाषिक संरचना में वैज्ञानिक तथा तकनीकी (परिभाषिक) शब्दावली का प्रयोग-बाहुल्य अनिवार्य रूप से विद्यमान रहता है। चूँकि प्रयोजनमूलक हिन्दी के माध्यम से विज्ञान, प्रौद्योगिकी, विधि, मानविकी तथा प्रशासन जैसे गम्भीर विषयों का विवेचन-विश्लेषण तथा निरूपण किया जाता है, अतः उसके भाषा शैली में भी विचारात्मकता, गम्भीरता तथा कुछ हद तक दुरूहता आना स्वाभाविक है। विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी जैसे विषयों के निरूपण हेतु उनकी संकल्पनाओं, गुण-सूत्रों तथा प्रतीक-चिन्हों आदि के कारण प्रयोजनमूलक हिन्दी की सरचना में गम्भीरता के साथ जटिलता एवं दुरूहता आ जाती है। विधि अथवा कानून की धाराओं या उपबन्धों के स्पष्टीकरण में वाक्य-रचना को अत्यधिक जटिलता की शरण लेनी पड़ती है। प्रशासनिक कामकाज में उद्‌गार-वाचक या विस्मयादि-बोधक पदों, अलंकार तथा कहावतें-मुहावरे आदि का प्रयोग कभी नहीं किया जाता। इसके विपरित प्रशासनिक कामकाज की वाक्य-रचना में कर्म-वाच्य वाक्यों (मुझे यह कहने का निदेश हुआ है···श्री रामधन को सूचित किया जाता है··· वह अपनी ड्यूटी पर तुरन्त लौट आये आदि) का प्रयोग मुख्यतः पाया जाता है।

प्रयोजनमूलक हिन्दी-भाषा का मुख्य ध्येय या उद्देश्य ज्ञान-विज्ञान तथा प्रशासन आदि अनेकविध क्षेत्रों की प्रयोजन-परक (प्रायोगिक) अभिव्यक्ति है और इस सन्दर्भ में उसका दायित्व उक्त ज्ञान-क्षेत्रों की उपयोगिता के साथ जुड़ा हुआ है। इस अर्थ में उसका ध्येय व्यापक रूप से सेवा-माध्यम (Service-medium) के रूप में प्रभावशाली उपादेय कार्य होता है। फलतः विभिन्न ज्ञान-विज्ञान तथा प्रशासन की शाखा-उप-शाखाओं की अभिव्यक्ति संदर्भ स्थिति तथा विषय-वस्तु के अनुसार प्रयोजनमूलक हिन्दी की भाषा-संरचना में बदलाव अथवा भिन्नता पायी जाती है। किन्तु इसके बावजूद उसकी भाषिक संरचना की विशिष्टता बराबर बनी हुई है, जिसके कारण प्रयोजनमूलक हिन्दी की गत्यात्मकता अखण्ड रूप से अक्षुण्ण है।